तत्त्वार्थसूत्र

परिचय - पुनरावर्तन

मूलसूत्र

हितोपदेशी | वीतरागी

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम्।

ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये॥

सर्वज्ञ | प्रयोजन - भावना

सम्यग्ज्ञान व मिथ्याज्ञान की तुलना

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥

अर्थ - [यदृच्छोपलब्धेः] अपनी इच्छा से चाहे जैसा (Whims) ग्रहण करने के कारण [सत् असतोः] विद्यमान और अविद्यमान पदार्थों का [अविशेषात्] भेदरूप ज्ञान (यथार्थ विवेक) न होने से [उन्मत्तवत्] पागल के ज्ञान की भाँति मिथ्यादृष्टि का ज्ञान विपरीत अर्थात् मिथ्याज्ञान ही होता है।

अध्याय १: सूत्र ३२ - सम्यग्ज्ञान व मिथ्याज्ञान की तुलना

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - अधिकार की विषयवस्तु

- अविनाशी सुख के लिए सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप एक ही मार्ग है, यह पहिले सूत्र में बताकर,
- दूसरे सूत्र में सम्यग्दर्शन का लक्षण बताता है;
- जिसकी श्रद्धा से सम्यग्दर्शन होता है, वे सात तत्त्व चौथे सूत्र में बताये हैं,
- तत्त्वों को जानने के लिए प्रमाण और नय के ज्ञानों की आवश्यकता है, ऐसा ६वें सूत्र में कहा है।

अध्याय १: सूत्र ३२ - सम्यग्ज्ञान व मिथ्याज्ञान की तुलना

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - अधिकार की विषयवस्तु

- पाँच ज्ञान सम्यक् हैं, इसलिए वे प्रमाण हैं, यह ९-१०वें सूत्र में बताया है
- और उन पाँच सम्यग्ज्ञानों का स्वरूप ११ से ३०वें सूत्र तक बताया है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - अधिकार की विषयवस्तु

- इतनी भूमिका बाँधने के बाद मति, श्रुत और अवधि यह तीन मिथ्याज्ञान भी होते हैं और जीव अनादिकाल से मिथ्यादृष्टि है, इसलिए वह जब तक सम्यक्त्व को नहीं पाता, तब तक उसका ज्ञान विपर्यय है, यह ३१वें सूत्र में बताया है।
- सुख के सच्चे अभिलाषी को सर्व प्रथम मिथ्यादर्शन का त्याग करना चाहिए - यह बताने के लिए इस सूत्र में मिथ्याज्ञान जो कि मिथ्यादर्शन पूर्वक ही होता है, उसका स्वरूप बताया है।

अध्याय १: सूत्र ३२ - सम्यग्ज्ञान व मिथ्याज्ञान की तुलना

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - अधिकार की विषयवस्तु

- मोक्षमार्ग
  - सूत्र १-३० — अस्ति — सम्यग्दर्शन ओर सम्यग्ज्ञान का स्वरूप
  - सूत्र ३१ , ३२ — नास्ति — मिथ्यादर्शन ओर मिथ्याज्ञान का स्वरूप

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - अधिकार की विषयवस्तु

इस प्रकार 'अस्ति–नास्ति' के द्वारा अर्थात् अनेकान्त के द्वारा सम्यग्ज्ञान को प्रगट करके मिथ्याज्ञान की नास्ति करने के लिए उपदेश दिया है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - सूत्र का अर्थ

सत् = विद्यमान (वस्तु) असत् = अविद्यमान (वस्तु)

अविशेषात् = इन दोनों का यथार्थ विवेक न होने से।

यदृच्छ (विपर्यय) उपलब्धेः = [विपर्यय शब्द की ३१वें सूत्र से अनुवृत्ति चली आई है।] विपरीत-अपनी मनमानी इच्छानुसार कल्पनाएँ होने से वह मिथ्याज्ञान है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - सूत्र का अर्थ

उन्मत्तवत् - मदिरा पीए हुए मनुष्य की भाँति।

विपर्यय - विपरीतता

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - सत् का स्वरूप

सत् – त्रिकाल टिकनेवाला, सत्यार्थ, परमार्थ, भूतार्थ, निश्चय, शुद्ध यह सब एकार्थवाचक शब्द हैं। जीव का ज्ञायकभाव त्रैकालिक अखण्ड है; इसलिए वह सत्, सत्यार्थ, परमार्थ, भूतार्थ, निश्चय और शुद्ध है। इस दृष्टि को द्रव्यदृष्टि, वस्तुदृष्टि, शिवदृष्टि, तत्त्वदृष्टि और कल्याणकारी दृष्टि भी कहते हैं।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - असत् का स्वरूप

असत् – क्षणिक, अभूतार्थ, व्यवहार, भेद, पर्याय, भङ्ग, अविद्यमान, जीव में होनेवाला विकारभाव असत् है, क्योंकि वह क्षणिक है और टालने पर टाला जा सकता है।

अध्याय १: सूत्र ३२ - सम्यग्ज्ञान व मिथ्याज्ञान की तुलना

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - सम्यग्ज्ञान कैसे हो ?

जीव अनादि काल से इस असत् विकारी भाव पर दृष्टि रख रहा है, इसलिए उसे पर्यायबुद्धि, व्यवहारविमूढ़, अज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, मोही और मूढ़ भी कहा जाता है। अज्ञानी जीव इस असत् क्षणिक भाव को अपना मान रहा है अर्थात् वह असत् को सत् मान रहा है; इसलिए इस भेद को जानकर जो असत् को गौण करके सत्स्वरूप पर भार देकर अपने ज्ञायक -स्वभाव की ओर उन्मुख होता है, वह मिथ्याज्ञान को दूर करके सम्यग्ज्ञान प्रगट करता है; उसकी उन्मत्तता दूर हो जाती है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - सूत्र का भाव

सुख के सच्चे अभिलाषी को मिथ्याज्ञान का स्वरूप समझाने के लिये कहा है कि

१- मिथ्यादृष्टि जीव सत् और असत् के बीच का भेद (विवेक) नहीं जानता, इससे सिद्ध हुआ कि प्रत्येक भव्य जीव को पहिले सत् क्या है, और असत् क्या है, इसका यथार्थ ज्ञान प्राप्त करके मिथ्याज्ञान को दूर करना चाहिए।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - सूत्र का भाव

२- जहाँ सत् और असत् के भेद का अज्ञान होता है, वहाँ नासमझपूर्वक जीव जैसा अपने को ठीक लगता है, वैसा पागल पुरुष की भाँति अथवा शराब पीये हुए मनुष्य की भाँति मिथ्या कल्पनाएँ किया ही करता है। इसलिए यह समझाया है कि सुख के सच्चे अभिलाषी जीव को सच्ची समझपूर्वक मिथ्या कल्पनाओं का नाश करना चाहिए।

अध्याय १: सूत्र ३२ - सम्यग्ज्ञान व मिथ्याज्ञान की तुलना

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - विपर्यय का स्वरूप

विपर्यय – विपरीतता, वह तीन प्रकार की है – १. कारणविपरीतता, २. स्वरूप–विपरीतता, ३. भेदाभेदविपरीतता।

कारणविपरीतता – मूलकारण को न पहचाने और अन्यथा कारण को माने।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - विपर्यय का स्वरूप

स्वरूपविपरीतता – जिसे जानता है, उसके मूल वस्तुभूत स्वरूप को न पहचाने और अन्यथा स्वरूप को जाने।

भेदाभेदविपरीतता – जिसे वह जानता है, उसे 'यह इससे भिन्न है' और 'यह इससे अभिन्न है' – इस प्रकार यथार्थ न पहचानकर अन्यथा भिन्नत्व–अभिन्नत्व को माने, सो भेदाभेदविपरीतता है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - विपरीतता कैसे दूर हो ?

- सच्चे धर्म की परिपाटी है कि पहले जीव सम्यक्त्व प्रगट करता है, पश्चात् व्रतरूप शुभभाव होते हैं
- और सम्यक्त्व स्व और पर का श्रद्धान होने पर होता है तथा वह श्रद्धान द्रव्यानुयोग (अध्यात्मशास्त्रों) का अभ्यास करने से होता है,
- इसलिए पहले जीव को द्रव्यानुयोग के अनुसार श्रद्धा करके सम्यग्दृष्टि होना चाहिए और फिर स्वयं चरणानुयोग के अनुसार सच्चे व्रतादि धारण करके व्रती होना चाहिए।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - विपरीतता कैसे दूर हो ?

- इस प्रकार मुख्यता से तो निचली दशा में ही द्रव्यानुयोग कार्यकारी है। यथार्थ अभ्यास के परिणामस्वरूप विपरीतता को दूर होने पर निम्न प्रकार यथार्थतया मानता है —

(आधुनिक हिन्दी मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ २१३)

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - कारणविपरीतता कैसे दूर हो ?

(१) एक द्रव्य, उसके गुण या पर्याय दूसरे द्रव्य, उसके गुण या पर्याय में कुछ भी नहीं कर सकते। प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने कारण से अपनी पर्याय धारण करता है। विकारी अवस्था के समय परद्रव्य निमित्तरूप अर्थात् उपस्थित तो होता है किन्तु वह किसी अन्य द्रव्य में विक्रिया (कुछ भी) नहीं कर सकता।

(श्री समयसार गाथा ३७३ से ३८२ टीका, पृष्ठ ५१५)

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - कारणविपरीतता कैसे दूर हो ?

प्रत्येक द्रव्य में **अगुरुलघुत्व** नामक गुण है, इसलिए वह द्रव्य अन्यरूप नहीं होता, एक गुण दूसरे रूप नहीं होता और एक पर्याय दूसरे रूप नहीं होती। एक द्रव्य के गुण या पर्याय उस द्रव्य से पृथक् नहीं हो सकते। इस प्रकार जो अपने क्षेत्र से अलग नहीं हो सकते और पर द्रव्य में नहीं जा सकते, तब फिर वे उसका क्या कर सकते हैं ? कुछ भी नहीं।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - कारणविपरीतता कैसे दूर हो ?

एक द्रव्य, गुण या पर्याय दूसरे द्रव्य की पर्याय में कारण नहीं होते, इसी प्रकार वे दूसरे का कार्य भी नहीं होते। ऐसी **अकारणकार्यत्वशक्ति** प्रत्येक द्रव्य में विद्यमान है। इस प्रकार समझ लेने पर कारणविपरीतता दूर हो जाती है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - स्वरूपविपरीतता कैसे दूर हो ?

(२) प्रत्येक द्रव्य स्वतन्त्र है। जीवद्रव्य चेतनागुणस्वरूप है, पुद्गलद्रव्य स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण स्वरूप है। जब तक जीव ऐसी विपरीत पकड़ पकड़े रहता है कि 'मैं पर का, कुछ कर सकता हूँ और पर मेरा कुछ कर सकता है तथा शुभ विकल्प से लाभ होता है,' तब तक उसकी अज्ञानरूप पर्याय बनी रहती है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - स्वरूपविपरीतता कैसे दूर हो ?

जब जीव यथार्थ को समझता है अर्थात् सत् को समझता है, तब यथार्थ मान्यतापूर्वक उसे सच्चा ज्ञान होता है। अन्य चार द्रव्य (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश और काल) अरूपी हैं, उनकी कभी अशुद्ध अवस्था नहीं होती। इस प्रकार समझ लेने पर स्वरूपविपरीतता दूर हो जाती है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - भेदाभेदविपरीतता कैसे दूर हो ?

परद्रव्य, जड़कर्म और शरीर से जीव त्रिकाल भिन्न है। जब वे एकक्षेत्रावगाह-सम्बन्ध से रहते हैं, तब भी जीव के साथ एक नहीं हो सकते। एक द्रव्य के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव दूसरे द्रव्य में नास्तिरूप हैं; क्योंकि दूसरे द्रव्य से वह द्रव्य चारों प्रकार से भिन्न है। प्रत्येक द्रव्य स्वयं अपने गुण से अभिन्न है, क्योंकि उससे वह द्रव्य कभी पृथक् नहीं हो सकता। इस प्रकार समझ लेने पर भेदाभेदविपरीतता दूर हो जाती है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - विपर्यय के प्रकार

विपर्यय – भी दो प्रकार का है, सहज और आहार्य।

(१) **सहज** – जो स्वतः अपनी भूल से अर्थात् परोपदेश के बिना विपरीतता उत्पन्न होती है।

(२) **आहार्य** – दूसरे के उपदेश से ग्रहण की गई विपरीतता। यह श्रोत्रेन्द्रिय के द्वारा होनेवाले कुमतिज्ञानपूर्वक ग्रहण किया गया कुश्रुतज्ञान है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - संशय के कुछ प्रकार

१-कुछ लोगों को यह संशय होता है कि धर्म या अधर्म कुछ होगा या नहीं?

२- कुछ लोगों को सर्वज्ञ के अस्तित्व-नास्तित्व का संशय होता है।

३- कुछ लोगों को परलोक के अस्तित्व-नास्तित्व का संशय होता है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - अनध्यवसाय के कुछ प्रकार

४- कुछ लोगों को अनध्यवसाय (अनिर्णय) होता है। वे कहते हैं कि हेतुवादरूप तर्कशास्त्र है, इसलिए उससे कुछ निर्णय नहीं हो सकता और जो आगम है, सो वे भिन्न-भिन्न प्रकार से वस्तु का स्वरूप बतलाते हैं, कोई कुछ कहता है और कोई कुछ, इसलिए उनकी परस्पर बात नहीं मिलती।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - अनध्यवसाय के कुछ प्रकार

५- कुछ लोगों को ऐसा अनध्यवसाय होता है कि कोई ज्ञाता सर्वज्ञ अथवा कोई मुनि या ज्ञानी प्रत्यक्ष दिखाई नहीं देता कि जिसके वचनों को हम प्रमाण मान सकें और धर्म का स्वरूप अति सूक्ष्म है, इसलिए कैसे निर्णय हो सकता है? इसलिए 'महाजनो येन गतः स पन्थाः' अर्थात् बड़े आदमी जिस मार्ग से जाते हैं, उसी मार्ग पर हमें चलना चाहिए।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - विपर्यय के कुछ प्रकार

६- कुछ लोग वीतराग धर्म का लौकिक वादों के साथ समन्वय करते हैं। वे शुभभावों के वर्णन में कुछ समानता देखकर जगत में चलनेवाली सभी धार्मिक मान्यताओं को एक मान बैठते हैं। (यह विपर्यय है।)

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - विपर्यय के कुछ प्रकार

७- कुछ लोग यह मानते हैं कि मन्दकषाय से धर्म (शुद्धता) होता है, (यह भी विपर्यय है।)

८- कुछ लोग ईश्वर के स्वरूप को इस प्रकार विपर्यय मानते हैं कि इस जगत को किसी ईश्वर ने उत्पन्न किया है और वह उसका नियामक है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ - सूत्र का सार

इस प्रकार संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय अनेक प्रकार से मिथ्याज्ञान में होते हैं; इसलिए सत् और असत् का यथार्थ भेद समझकर, स्वच्छन्दतापूर्वक की जानेवाली कल्पनाओं और उन्मत्तता को दूर करने के लिए यह सूत्र कहते हैं। [मिथ्यात्व को उन्मत्तता कहा है, क्योंकि मिथ्यात्व से अनन्त पापों का बन्ध होता है, जिसका ध्यान जगत को नहीं है।] ॥३२ ॥

तत्त्वार्थसूत्र

अध्याय १ सूत्र ३१-३२

आगे की विषय-वस्तु....

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र
मति , श्रुत , अवधि , मन:पर्यय , केवलज्ञान का विषय	२६-२९	४
एक जीव के एक साथ कितने ज्ञान हो सकते हैं ?	३०	१
मति , श्रुत और अवधिज्ञान में मिथ्यात्व एवं उत्तर	३१ , ३२	२
प्रमाण का स्वरुप कहा गया , अब श्रुतज्ञान के अंशरुप नय का स्वरुप कहते हैं	३३	१

जिनवाणी स्तुति